सम्पादक पुष्पांक ६२ श्री खरतरगच्छीय ज्ञान मन्दिर, जयपुर

श्रीकेसरियाजी तीर्थ का इतिहास.

जिसमें

प्राचीन प्रमाणादि का संग्रह है.



सपादक

चंदनमल नागोरी.

छोटी सादडी (मेवाड)

प्रकाशक

चदनमल नागोरी, जैन पुस्तकालय

पो छोटी सादडी (मेवाट)

तीसरी आवृत्ति] [कीमत दो रुपये पचास पैसे

क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्मचौराः ? ॥
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानि ? ॥

भावार्थ—हे भगवन् ! क्रोध का तो आपने पहले ही नाश कर दिया था इसलिये आश्चर्य होता है कि कर्मरूपी चोरों को—शत्रुओं को क्रोध विना कैसे जलाये ? जैसे ठडा हिम (दाह) हरे वृक्षों को शीतलता से जला देता है इसी तरह विना क्रोध किये जलाने में शीतलता भी काम देती हैं। अर्थात् शांति से काम लिया जाय तो वह भी मंजिल पर पहुँचता है।

इति वचनात्.

मुद्रक :—
प्रतापसिह लूणिया
जीव प्रिंटिंग प्रेस
ब्रह्मपुरी, अजमेर।

श्री शासन रत्न प्रभाविक

गुरुदेव श्री



श्री परम पूज्य आचार्य देवेश श्री विजयप्रताप सूरीश्वरजी साहब स्व शिष्य प्रभाविक व्याख्यान वाचस्पति श्री विजयधर्म सूरीश्वरजी से ज्ञान गोष्टी कर रहे हैं ।

अर्पण पत्र समर्पित

श्रीमान् परमपूज्य शासन रक्षक

आचार्य देवेश श्रीविजयप्रतापसूरीश्वरजी साहब

की पवित्र सेवामें

श्री श्रद्धेय गुरुदेव भगवन्न, आपके उपदेश द्वारा अनेक मन्दिरो के उद्धार निर्माण पट निर्माण और पाठशाला, उपाश्रय स्थापन के कार्य हुए हैं, आपका वात्सल्य भाव समय समय पर स्मरण होता है, मेवाड देश मे आपको कृपा से धर्म कार्य प्रशसा योग्य हुए और होते रहते हैं।

कृपासिन्धु ! आपकी असीम कृपा से मैं धर्म कार्य कर पाया हूँ, और शका निवारण प्रश्नोत्तरी मे आपका सहयोग मेरी आत्मा को अत्यन्त हितकर हुवा है, जिसके स्मरण हेतु श्री केसरियाजी तीर्थ का इतिहास तीसरी आवृति समर्पित करता हूँ सो स्वीकार करने की उदारता करियेगा।

चरण सेवक—

चन्दनमल नागोरी.

इस पुस्तक की योजना में जिन ग्रन्थादि से सहायता ली गई है, उनके कर्त्तागण को धन्यवाद देते हुए पुस्तकों की नामावली यहां लिखते है।



१. लेखसंग्रह बाबूसाहब पूर्णचन्दजी नाहर कलकत्ता वालों का
२. सूरीश्वर और सम्राट
३. कृपारसकोष
४. आत्मप्रबोध
५. रत्नसागर
६. मेवाड राज्य का इतिहास भाग १
७. मेवाड राज्य का इतिहास भाग २
८. राजपूताने का इतिहास
९. दिगम्बर जैन डिरेक्टरी
१०. टॉड राजस्थान
११. देवकुलपाटक
१२. स्तवन संग्रह भाग १
१३. स्तवन संग्रह
१४. लावनी संग्रह
१५. भीम चौपाई
१६. केसरियाजीनो वृतान्त
१७. हस्तलिखित पत्र ४
18. The Imperial Gazetteer of India VOL. XXI 1908
19. Indian Antiquary VOL. I. 1872
20. Times of India 1872
21. Mr. Kendy
22. Political Agent.
23. Jainismus.
24. Mr. J. C. Brooke.
२५. कल्याणमन्दिर स्तोत्र
२६. पंच प्रतिक्रमण सूत्र
२७. रत्न संचय
२८. सुकृत सागर
२९. गुर्वावली
३०. गच्छमत प्रबंध
३१. जैन युग
३२. रत्न संचय भाग २



प्रस्तावना.

इतिहास लिखने में शिलालेख-प्रशस्ति-ताम्रपत्र एव पत्र लेखन यही विशेष सहायक होते हैं, और इतिहास का प्रकाशन करनेवाले ऐसे ही प्रमाणो के सम्पादन मे परिश्रम किया करते हैं। तलाश करने से जैसा साहित्य प्राप्त कर पाते हैं वैसा ही पाठको के सामने रखते हैं, और अगर वह प्रमाणिक होता है तो जनता उस पर विश्वास करती है। इसके सिवाय प्राचीन काल से प्रचलित विधि विधान कब्जा व अमल (भुगत भोग) यह भी युक्ति पुर सर बताये जाय तो हक्क साबित करने मे सहायक होते हैं। हमने इस पुस्तक मे यथाशक्ति प्रयत्न से जो साहित्य सप्राप्त हुआ उसके आधार पर बयान किया है। और इस इतिहास को १० प्रकरण में विभक्त कर जनता के सामने रखते हैं।

मन्दिर प्रकरण मे मन्दिर बनवाने का समय व किस तरीके पर बनवाया गया और ऐसे मन्दिर किस सम्प्रदाय मे बने हुवे है वगैराह बतलाया है सो पढने से पाठको को पता चलेगा कि दर असल क्या बात है।

प्रतिमा प्रकरण में स्पष्टीकरण करते हमने जो लेख बताये हैं उनमें सबसे पुराना लेख सम्वत् १४३१ का है जो पृष्ठ ५ पर छपा है। और शिलालेखो का बयान करते श्रीयुत् ओझाजी साहब सबसे पुराना लेख देवकुलिकाओ के वर्णन मे सम्वत् १६११ का बताते है। इसके सिवाय दिगम्बर जैन डिरेक्टरी में

दिगम्बर प्रतिमाओं के प्रतिष्ठा का जिकर करते सम्वत् १७३४ से पुराना और सम्वत् १७७६ के वाद का लेख कोई नहीं बताया गया अतः सम्वत् १६११ का लेख जिसका जिकर श्रीमान् ओझाजी साहब करते है वह भी श्वेताम्वरीय पाया जाता है। इन दोनों ग्रन्थकर्त्ताने सम्वत् १४३१ वाले लेख का उल्लेख क्यों नहीं किया जिसका सवव हम नहीं वता सकते। अलबत्ता इन लेखों को वावू साहव पूर्णचन्दजीने निज के लेख संग्रह में प्रकाशित किये है। और इन्ही दो लेखों के आधार पर The Imperial Gazetteer of India (New Edition 1908) में लिखा है जिसका बयान हम पृष्ठ ५ पर कर चुके हैं।

पादुका प्रकरण में भी जो बयान किया गया है और शिलालेख दिये गये है वह देखने योग्य है। अलवत्ता श्रीमान् सिद्धिचन्द्रजी भानुचन्द्रजी के चरण जो मरुदेवीजी के हाथी के समीप स्थापित है उनका शिलालेख जिसकी नकल हमको प्राप्त न हो सकी इसलिये नहीं दी गई। और ध्वजादण्ड प्रकरण में भी पाटीयों के लेख की नकल दी गई है। इस विषय मे और खोजना की जाय तो ध्वजादण्ड चढ़ाने के प्रमाण प्राप्त हो सकते हैं किन्तु पाटी ऊपर जो लेख रहता है वह लब्ध होना कठिन बात है; तथापि जो कुछ प्राप्त हुआ वह पाठकों के सामने है। और पूजा प्रकरण मे जहाँ तक हो सका स्पष्टीकरण किया है, और प्राचीन पद्धति जो जैन धर्मानुसार अब तक चली आती है उसका उल्लेख है। जिसको पढ़ने से व विधि-विधान इत्यादि पर लक्ष देने से मालूम होगा कि प्रचलित प्रथा व इस विषय के प्रमाण क्या वता रहे है? इसके वाद परवाना प्रकरण को

तो पूरा लिखा जाय तो एक अच्छी बडी पुस्तक बन सकती है, लेकिन हमने उपयोगी परवानो में से कुछ नकलें पाठको के सामने रक्खी हैं, जिनको देखने से मालूम हो जायगा कि मेवाड राज्य की कृपा जैनियो पर किस प्रकार रहती आई है। और परवानो के सिवाय हुक्म एहकाम तो कई मरतबा ऐसे ऐसे जारी हुवे हैं वैसे आज होना असम्भव है।

आपत्तिकाल गुणानुवाद प्रकरण में भी जो सम्पादन हो सका उसका बयान किया गया है, और गुणानुवाद प्रकरण में हमने ज्यादे खोज नही की क्योंकि लावनीया, स्तवन, छन्द आदि इस तीर्थ के बहुत बने हुवे है और हमको हमारे संग्रह में से जो ठीक मालूम हुवा उनको गुणानुवाद मे प्रकाशित किये हैं। और मेवाड राज्य और जन समाज का लेख तो अवश्य पढने लायक है। इसको पूरा लिखा जाय तो एक पुस्तक बन सकती है। अत कुछ नमूने के तौर जो बयान पाठको के सामने रखा है उसे अवलोकन करना चाहिये। इस तरह यह एक छोटी सी पुस्तक तैयार कर जनता के सामने रखी जाती है। जिसके प्रकाशन में किसी प्रकार की क्षति हो या प्रूफ संशोधन में दृष्टिदोष के कारण अशुद्धिया रह गई हो उनके लिये पाठक क्षमा कर-सुधार कर पढें और विशेष हम क्या कहें।

सम्वत् १९९० ज्येष्ठ शुक्ला १०
शनिवार
मु पालीताना (काठीयावाड)

समाजसेवक—
चंदनमल नागोरी.
छोटी सादडी (मेवाड).

अनुक्रमणिका

॥ श्री ॥

* स्वागतम् *

सद्गत् श्रीमान प्रभाश्चन्द्र चट्टरजी को छोटी सादडी जैन उपाश्रय मे अभिवादन पत्र समर्पित किया जिसकी प्रतिलिपि निम्न प्रकार है।

हुवा सुदिन धन भाग हमारा प्रभुवर स्वागत करते हैं।
सभी नगरके युवा वृद्ध शिशु मनसे स्वागत करते है॥
धन्य धन्य मेवाड भूमि जहा हिन्दूकुल छत्तरधारी।
'फतहसिंहजी' महाराणा हैं शूरवीर अरु बलकारी॥
गऊ सिंह जिनके शासन मे साथ ही साथ विचरते है।
सभी नगरके युवा वृद्ध शिशु मनसे स्वागत करते हैं॥
यही आश युवराज काज अपने से हमे दिखाते हैं।
'भूपालसिंहजी' भी रैयतसे अनुपम प्रेम जताते है॥
रखे चिरायु प्रभू आपको विनय सदा हम करते हैं।
सभी नगरके युवा वृद्ध शिशु मनसे स्वागत करते हैं॥
मिले योग्य दीवान हमे ज्यो सुवरणमे शुभगध मिले।
धर्मवीर गुणवान मिले ज्यो देवनमे गुरु आन मिले॥
प्रभासचन्द्र चटरजी का हम सब मिल स्वागत करते हैं।
सभी नगरके युवा वृद्ध शिशु दिलसे स्वागत करते हैं॥
नगर सादडी छोटो के हम धन्य हुये सब नरनारी।
समय २ पर आप पधारें, "चन्दन" होवे आभारी॥
दीन प्रजाजन क्याकर सक्त ? करबद्ध स्वागत करते हैं।
सभी नगरके युवा वृद्ध शिशु मनसे स्वागत करते हैं॥

अभिनन्दन समर्पित



सद्गत् श्रीमान् महाराणा साहब श्री फतहसिंहजी साहब की सेवा में अभिनन्दन पत्र अनुमान सो तोला चांदी के कासकट जिसमें चवदा स्वपन और गाय सिंह सरोवर पर पानी पीते हुए आदि चित्र सहित में रखकर श्रीमान् सद्गत् मेहताजी साहब श्री फतहलालजी साहेब द्वारा समर्पित कराया जिसकी प्रतिलिपि निम्न प्रकार है।



श्रीमन्महाराणाऽधिराज "श्री फतहसिंहजी" व्रत धारी।
मेवाड भूमि के शासक हो, पर सब भारत के अधिकारी॥
वे भी पूर्वज थे श्रीमान् के, हिन्द-पन नहिं छोडा था।
हिन्दू-आन पर मिटे परन्तु, रण से मुख नहीं मोडा था॥
उनही के सम स्वयं आप हैं, "फतहसिहजी" व्रतधारी।
मेवाड भूमि के शासक हो, पर सब भारत के अधिकारी॥१॥
राम-राज्य सम-राज्य आपका, सभी सुखी हैं नरनारी।
जनकराव सम धीर बड़े, प्रणवीर आप गुण-वर-गारी॥
वह्नि सम प्रभु तेज यशस्वी, फैला चहुं दिशि में भारी।
मेवाड भूमि के शासक हो पर, सब भारत के अधिकारी॥२॥
अर्जुन सम हो वीर आप, रणधीर भीष्म सम प्रणधारी।
धन्य धन्य मेवाड भूमि, धन्य हिन्दू-कुल छत्तरधारी॥

जैन समाजो पर असीम, उपकार आपके हैं भारी।
मेवाड भूमि के शासक हो पर, सब भारत के अधिकारी ॥३॥
भूतपूर्व महाराणाओ ने, समाज हित साधन कीने।
जैन समाजो को तो प्रभुवर, तन मन धन सब ही दीने ॥
तेहि कारण है भवन-भव्य, जैनो के राज्य मे अतिभारी।
मेवाड भूमि के शासक हो पर, सब भारत के अधिकारी ॥४॥
जन्मोत्सव पर छोटी सादडी के सवही नर अरु नारी।
करें प्रार्थना जगदीश्वर से, मगल मय प्रभु हितकारी ॥
रखें चिरायु प्रभु आपको, दर्शनेच्छु "चन्दन" भारी।
मेवाड भूमि के शासक हो पर, सब भारत के अधिकारी ॥५॥

छोटी सादडी (मेवाड)
पोप शुक्रवार १९८४

चरण सेवक
चदनमल नागोरी



श्रीमान् मेदपाटेश्वर के चरण कमल में जन्मोत्सव पर बधाई

धन्य धन्य मेवाड भूमि, जहां हिन्दूकुल छत्तरधारी ।
"भूपालसिंहजी" महाराणा हैं, मेदपाट के अधिकारी ॥
करें प्रार्थना जगदीश्वर से जन्मोत्सव पर हितकारी ।
रखें चिरायु प्रभु आपको, दर्शनेच्छु "चन्दन" भारी ॥

मेदपाट शुभ देशजित, राजत राण भूपाल ।
जिनकी छोटी सादडी, सोहते बडी रसाल ॥
देव भुवन जहां शोभते, महिमा जास अपार ।
निज निज धर्म परायण, प्रजा बंधु परिवार ॥
तिह कारण विनती यही, दीर्घायु हो राण ।
"चन्दनमल" की प्रार्थना, चरण कमल में जाण ॥

चरण किंकर

सं० २००४ फागुनवदी ११ — चन्दनमल नागोरी

जैन समाज से निवेदन.

जैन साहित्य-संसार मे एक ऐतिहासिक पुस्तक की वृद्धि हुई है जिस का प्रकाशित करना विद्वान इतिहासवेत्ताओ का काम था तथापि मेरे जैसा सामान्य व्यक्ति एसे काय को हाथ में लेकर पुस्तक प्रकाशन कराने का साहस करे तो जिस मे कई प्रकार की त्रुटिया रहजाना सम्भव है, क्योकि पुस्तक प्रकाशन का कार्य मामूली बात नही है। इसी कारण से इस पुस्तक मे भाषासौंदर्य, लालित्य वाञ्चन और शृंखलाबद्ध लेख का तो अभाव ही है। लेकिन उद्देश मात्र इतना ही है कि श्रीकेसरियानाथजी महाराज के तीर्थ का वास्तविक वृत्तान्त जनता के जानने मे आवे और जैन समाज नये झगडे-टटो से बचे।

हम इस इतिहास को प्रकाशित करा यह नहीं चाहते कि जैन श्वेताम्बर समाज के ही हक्क साबित होने के कारण पूजन-वन्दन के अधिकारी अन्य कोई नहीं हो सकते। न तो हम इस विचार के हैं और न हमे इस तरह का पक्षपात है। हम तो यही चाहते हैं कि जिनप्रतिमा जिनमन्दिर के नाम से झगडे किये जाय, लडाइया लडी जाय यह सर्वथा अनिच्छनीय है। जैन समाज व्यापारी व बुद्धिशाली नरवीर प्रावर्मी पुरुषो की खानदान से पैदायस है, और ऐसी चतुर-कार्यकुशल समाज झगडे-टटों में अपना पुष्कल धन खर्च कर हसी के पात्र बने इस को बुद्धिमान लोग देखते नही हैं, किन्तु निन्दात्मक दृष्टि से देखते हैं। और जिस का अंतिम परिणाम यही निकलता है कि दो के लडने मे तीसरे को लाभ। जैन समाज की कमाई का गहरा धन तीर्थो की मुकद्दमेबाजी में चला गया और नतीजा कुछ भी नहीं। सारी समाज की स्थिति निर्माल्य हो गई, कई कुटुम्ब रक अवस्था मे आ गये, व्यापार का भी अन्त आगया और लोग वीर्यहीन हो गये, करामात-चमत्कार का अभाव हो गया और आपसी टटे-झगडों से प्राचीन ख्याति व प्रभुता का भी नाश

कर वैठे, और कई श्रीमंत श्रद्धाहीन वन चुके और सरकारी अमलदार-शाहीने भी मुंह फेर कर पुरानी मर्यादा को छोडदी। इत्यादि तरह से जहां देखो वहां क्लेशमय संसार, दुःख दारिद्र का रोना-पीटना और सुवह की शाम होना कठिन, ऐसी अवस्था में मुकद्दमेवाजी में धन वरवाद करना सम्पूर्ण धृष्टता है। अतएव हम तो वारवार यही प्रार्थना करेंगे कि अब समाज को संभल जाना चाहिये, अव वख्त सोने का नहीं है।

जमाने के हेरफेर को देखते इस समय इस पुस्तकको प्रकाशित कराने की आवश्यकता नही थी लेकिन वास्तविक इतिहास जानने में आवे और नये वखेडे पैदा न हों या पैदा हों तो उनको हटाने का मार्ग सुगम हो जाने के हेतु से ही इस पुस्तक का प्रकाशन आवश्यकीय समझा गया है।

इस पुस्तक का साहित्य संग्रह करने में श्रीमान् माणकसागरजी महाराजने वहुत सहायता प्रदान की है एतदर्थ महाराजश्री का अंतःकरण से उपकार मानता हूँ, और जिन महानुभावोने चित्र-शिलालेख आदि प्राप्ती में व प्रश्नोत्तर में अपना समय दिया है उनको धन्यवाद है। इस के अतिरिक्त इस पुस्तक के प्रकाशन मे श्रीयुत् किशनलालजी सम्पत्तलालजी लूनावत फलोधीनिवासी हाल पाली (मारवाड) ने द्रव्य सहायता की है एतदर्थ आपको धन्यवाद है।

पाठक ! पुस्तक के वांचन में त्रुटियों के लिये क्षमा कर इस के असल भाव को ग्रहण करें यही लेखक की प्रार्थना है। किं बहुना—

भवदीय—

चंदनमल नागोरी.



दूसरी आवृत्ति की प्रस्तावना

श्री केसरियाजी तीर्थ का इतिहास जिसकी प्रथमावृत्ति प्रकाशित होते ही लगभग तीन सौ पुस्तकें तो भेंट मे भेजी गई, और पाच सौ पुस्तकें ग्राहको द्वारा बिक चुकी इस लिए करीब एक महिने बाद ही इस इतिहास की दूसरी आवृत्ति का प्रकाशन कराने की आवश्यकता पाई गई। यह पुस्तक किस्सा कहानी व रसिक वार्त्ता वाञ्चन की पोषण करने वाली तो है नही। इसमे तो केवल इस तीर्थ के प्राचीन-अर्वाचीन प्रमाणो का ग्रह मात्र है, न तो कोई कल्पना युक्त उल्लेख है, और न अतिश्योक्ति है। केवल वास्तविक प्रमाण जो सम्प्राप्त हुए है, उनही के आधार पर लिखा गया है, और इसी कारण जैन जनता ने इसका ठीक सत्कार किया है ऐसा अनुमान होता है।

इस पुस्तक की प्रथमावृत्ति प्रकाशित होने के बाद हमे भामाशाह की वशावली का पता लगा जिसमे तीर्थ केसरियाजी मे ध्वजादड चढाने व जिर्णोद्धार कराने का उल्लेख है और सभव है क्योंकि भामाशाह की राजसेवा, सघसेवा और ज्ञाति सेवा प्रशसनिय थी, और साढे च्होत्तर शाह का वर्णन भी वशावली लिखने वालो की वहियो मे है, जिसकी नकल हमारे पास है, उसमे पता चलता है कि भामाशाह ने तीर्थ यात्रा

कर लेण दी, और उनके जीवन में ध्वजावंड चढ़ाने का भी वर्णन आता है, जिसकी नकल हम यहाँ लिखते हैं।

संवत् १६४३ महासुदी १३ शाह भामाजी केन धुलेवरा श्रीऋषभदेवजी महाराज के मंदिर को जिर्णोद्धार करापितं दंड प्रतिष्ठा कराई पछे यात्रा संवत् १६५२ रा वर्ष सुं लगाय संवत् १६५३ वर्षे सुदी माघशुक्ला १५ तिथी शाह भामाजी सब देशरी यात्रा कीधी याने लेणवांटी ६९००००० गुणहत्तर लाख खर्च कीदा पुन्य अर्थ मेदपाट, मारवाड़, मालवो, मेवाड़, आगरा, अहमदाबाद, पाटण खम्भाइत, गुजरात, काठियावाड़ दिखण वगैरा सर्वदेशे लेण वाँटी (दी) मोर १ (सोने की मोहर) नाम············संग हिस्से दत्वा वामणाने जीव धर्म वराग्य जाचकाने प्रबलदान दीधा, भोजक, पोखरणा, पोल-वाल ने जगनहजी ने मोहराँ ५०० वटवो मोत्याँरी माला १ घोड़ा ५०० सर्व करी एक लक्ष मुकादान दे अजाचकता कुल-गुरांने जाये परणां मोहर २ चंवरी री लाग कर दीधी पोसालरां भट्टारवजी श्री नरबद राजेन्द्रसूरिज़ी ने सोनरी सूत्र वीराव्या मोत्यांरी माला १ कडाजोडी, १ डोरी १ गछ परामणी इं सुजब दीधी वगैरा—

उपर्युक्त लेख से पता चलता है कि, भामाशाहने विक्रम संवत् १६४३ में नगर धुलेव में श्री केसरीयानाथजी महाराज के मंदिर पर ध्वजादंड चढाया जिसका प्रमाण वंशावली में मिलता है। वंशावली लिखने वाले निज की बहियों में उत्तम

कार्यो का वर्णन लिखते हैं, और यह प्रथा अब तक प्रचलित है। भामाशाह वीरप्रतापी महाराणाधिराज प्रताप सिंहजी के समकालीन थे और बादशाह से पट्टा लिखाया जिस का अनुमोदन महाराणाधिराज ने सवत १६३५ मे किया और परवाना भेजा उस समय के कुछ साल बाद ही ध्वजादड चढाने भामाशाह यहाँ आये तो यह मानने योग्य है। तीर्थप्रेम भक्तिवश यहा आये तो होगे लेकिन ध्वजादडारोहण के वर्णन से यहाँ सबब हैं, जिसके लिए वंशावली के सिवाय और कोई प्रमाण इस उल्लेख का हमारे देखने मे नही आया, अत जैसा देखा वैसा ही पाठको के सामने रखते है। भामाशाह आदि का वर्णन करते "जीवन–विकास अने विश्वावलोकन" नाम की गुजराती पुस्तक पृष्ट ३०८ पर वर्णन है, जिसका भावार्थ यह है कि–

मेवाड राज्य मे आशासाह और भामाशाह की अगत मदद को अलग रखते देखते हैं तो धार्मिक असर भी बहुत है। पर्युषण मे अमारी पडह का बजना.. केसरियाजीतीर्थ के लिये असाधारण भक्ति वगैरह जैनधर्म की पूर्ण असर के अवशेष हैं इत्यादि।

इस तरह जो कुछ प्राप्त हुआ पाठको के सामने है, और विशेष परिवर्तन तो दूसरी आवृत्ति मे नही है। आशा है जनता इसका ठीक सत्कार करेगी इत्यलम्।

भवदीय

१९९० असाढसुदी १० — चदनमल नागोरी

पालीताना (सौराष्ट) — छोटी सादडी (मेवाड)

तीसरी आवृति की प्रस्तावना

प्रथम और दूसरी आवृति के समय मे कागज के भाव और छपाई बाईडिग के भाव से इस समय पाच गुने से भी अधिक भाव हो गये हैं। तीर्थों के इतिहास मे प्रमाणित लेख शिलालेखआदि ही काम आते हैं, अत नया परिवर्तन नही कर सकते, परन्तु खोज करने से अधिक प्रमाण सम्पादन हुए हैं, उन्हे अब प्रकरण रूप में प्रकाशित कराये हैं, शिलालेख तो तत् स्थानो पर लगे है, और पट्टे परवाने सरकार से मिले हैं, जिनकी नकलें श्रीगरवीड के मदिर मे प्रतिमा खडित मुकद्दमे मे जैन श्वेताम्वर श्रीमघ उदयपुर की ओर से प्रस्तुत की गई थी, जिनकी प्रतिलिपि इसमे मुद्रित कराई है, और यह सब सन्देह रहित है, इनके अतिरिक्त समिति द्वारा सचालन के प्रमाण और पडो को दिये गये सूचनापत्र और पडो ने स्वीकृति पत्र लिख दिये वह सारे ही सनद रूप हैं, और स्वीकृति के अनुसार वर्तमान समय तक अमल चला आ रहा है, अत इस तरह के प्रमाण अवलोकन करने बाद निर्णय करना पाठकों के आधीन है।

प्रथम और दूसरी आवृति मे नौ चित्र दिये थे, उनके ब्लाक व फोटू प्रेस से नहीं आए और अमन फोट उदयपुर के आगेवान सज्जनो द्वारा सम्पादन नही हो सके, कई वार के लिखने पर सतोष योग्य उत्तर नहीं मिला इस कारण नये

ब्लाक नहीं बनवा सके, विशेष में हमारे संग्रह के अतिरिक्त और भी कई प्रमाण एक संस्था-समिति द्वारा संग्रह किये हैं, वह भी मांगने पर नहीं भेजे गए, और हमें विशेष आवश्यकता भी नहीं होने से प्रयत्न नहीं किया गया।

तीर्थों के लिए श्वेताम्बर दिगम्बर सम्प्रदाय का विवाद चलता रहता है, सारी सत्ता समाज के अधिकारियों के हाथ में है, दो की लड़ाई में तीसरे को लाभ होता है, अपार धन व्यय होता है, और संघठन नहीं हो पाता, छत्तीस का अङ्क बना रहता है, शासनदेव सबको सद्बुद्धि प्रदान करे।

सं० २०२३
आसोज सुदी १०
मु० निम्बाहेड़ा

निवेदक—
चन्दनमल नागोरी,
छोटी सादड़ी (मेवाड़)



श्री केसरियानाथजी ।

— o —

जैन श्वेताम्बर तीर्थ श्री केसरियानाथजी मेवाड देशातरगत उदयपुर राजधानी के निकटवृत्ति मगरा नामी जिले मे शहर उदयपुर से ४० चालीस माइल के फासले पर घुलेव नामी गाव मे वाके है ।

इम्पीरीयल गेजेटीयर ऑफ इन्डिया पुस्तक २६ सन् १६०८ की नवीन आवृत्ति पृष्ठ १६८–१६६ पर छपने मुवाफिक यह तीर्थ–राजपुताना उदयपुर स्टेट मे मगरा जिले मे एक किल्लेबन्ध परकोटे के अन्दर (घुलेव) गाव मे है और पहाड पर्वतो के बीच मे २४,०,५, N और ७३–४२' E इस दिशा मे याने उदयपुर से दक्षिण दिशा मे ४० चालीस माइल की दूरी पर खेरवाडा छावनी से ईशान कूण मे लगभग दस माइल के फासले पर है ।

घुलेव गाव मे एक बहुत अच्छा–सुन्दर नकसी–कोरणी के कामवाला जैन मन्दिर है । जिस मे मूलनायक जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेवजी महाराज की प्रतिमा जिन को श्री आदिनाथ भगवान भी कहते हैं । इस मन्दिर मे प्रतिमाजी स्थापित हैं, और मुख्य मूर्ति जो निज मन्दिर मे श्याम पाषाण की लगभग तीन फुट ऊँची पद्मासन स्थिति मे

इस लेख पर से ज्ञात होता है कि तीन शिलालेख जिनके आधार पर इम्पीरियल गजेटीयर मे लिखा गया है यह मन्दिर चौदहवीं सदी के आसपास का बना हुआ प्रतीत होता है। देखिये शिलालेख की नकल।

श्री कायासवास वासीता केवलावदाग नसो क्षमाप्रत (?) आदिनाथ प्रणमामि—विक्रमादित्य संवत् १४३१ वर्षे वैशाख सुदि अक्षय तिथौ बुध दिने चादीना धुराल...।

ऊपर का लेख विक्रम सम्वत् १४३१ का है। इसके बाद दूसरा लेख देखियेगा।

श्री आदिनाथ प्रणमामि नित्यं विक्रमादित्य संवत् १५७२ वैशाख सुदि ५ वार सोमवार श्री जशकराज श्री कला भार्या सोवलबाई चोजोराज यहां धुलेवा ग्राम श्री ऋषभनाथ प्रणम्य कडोआ फोह आ भार्या भरमी तस्या पवेई सा, भार्या हासलदे तस्य पगकारादेव रार गाय भ्रात वेणीदास भार्या लास्टी चाचा भार्या लीसा सकलनाथ नरपाल श्री काष्ठा संघ—श्री ऋषभनाथजी श्री नाभिराज कुष श्रीतां–रीकुल— ।

दोनों लेखों से पता चलता है कि इस मन्दिर का काम चौदहवीं सदी में बना है, और बाद में जिर्णोद्धार होता रहा

हो इस के सिवाय इस मन्दिर का मध्यभाग विक्रम सम्वत् १६८५ मे सम्पूर्ण होने का प्रमाण मिलता है। क्योंकि शिखर के ऊपर दो कारीगरो ने मन्दिर का काम सम्पूर्ण करते समय निज की मूर्त्तिया चित्रकर सूत्रधार की जगह खुद का नाम लिखा है, जिन मे से एक का नाम "भगवान" दूसरे का नाम "लाधा" और नाम के नीचे सम्वत् १६८५ भादवा विद ५ सोमवार लिखा है। इसलिये इस लेख पर से यह सिद्ध होता है कि शिखर का काम सम्वत् १६८५ में सम्पूर्ण हुवा हो। शिलालेख से तो यो इम्पीरियल गजेटीयर में लिखे मुवाफिक चौदहवी या पन्द्रहवी सदी मे बना हो या जारी किया हो और वह अनुकूलतापूर्वक सम्वत् १६८५ तक चलता रहा हो ऐसा अनुमान होता है।

मन्दिर की तामीर का ढग देखते पाया जाता है कि मन्दिर बनवाये बाद मन्दिर के आसपास धर्मशाला के मकानात बनवाये हो। क्योंकि हाल मे बावन जिनालय हैं उन देवरियो को देखते पाया जाता है कि देवरी आकार से उन की तामीर नही कराई गई, क्योकि उनके ऊपर उस समय का बनवाया हुवा गुम्मज मालूम नही होता, और बावन जिनालय की लाइन मे सामान रखने के लिये और भण्डार के नाम से जो कोठरियां हाल में मौजूद हैं इसी मुवाफिक चारो तर्फ हो ऐसा अनुमान होता है। और इस समय भी भण्डार के नाम से पहिचानी जाती हैं। उन कोठरियो पर गुम्मज नही है और बावन जिनालय पर भी शिखरनुमा या गुम्मज का कोई चिन्ह

जारी होना दिगम्बर भट्टारकजी महाराज क्षेमकीर्त्तिजी ने फरमाया है, जिस का विवरण दिगम्बर भाइयों की छपवाई हुई डिरेक्टरी में है। तो सम्भव है कि मन्दिर का मध्यमभाग सम्वत् १६८५ में सम्पूर्ण होने के बाद याने पन्द्रह सोलह साल के बाद ही भट्टारकजी महाराज इस तर्फ पधारे हों और यह कथन प्रतिपादित किया हो। इस तरह मन्दिर बनवाने का समय और कौन सा हिस्सा पहले व पीछे बनवाया गया इसका विचार करने बाद आगे देखते हैं तो एक और विशेष प्रमाण मिलता है और वह यह है कि मन्दिर के सामने जो नौ चौकी बनी हुई है उस की प्रशस्ति का लेख जैन श्वेताम्बरीय मन्दिर होने का प्रमाण बतलाता है। यह नौ चौकी श्वेताम्बराचार्य श्रीमान् जिनलाभसूरिजी के उपदेश से बनवाई है ऐसा शिलालेख से साबित होता है। यह लेख निज मन्दिर के दाहिनी तर्फ गोख के ऊपर अङ्कित है जिसकी नकल इस प्रकार है—

"संवत १८४३ वै. शु. १५ पूर्णिमा तिथी रविवासरे बृहत्खरतरगच्छे श्रीजिनभक्तिसूरि पट्टालंकारे भट्टारक श्री १०५ श्रीजिनलाभसूरिभिः। —श्रीरामविजयादी प्रमुखे सहूकआदेशात् सनोपुर—श्रीऋषभदेवजी"

ऊपर के लेखवाली नौ चौकी के लिये इतिहासवेत्ता श्रीमान् गौरीशङ्करजी हीराचन्दजी ओझाने निज के बनाये हुवे राजपूताने के इतिहास में पृष्ठ ३४५ पर बयान किया है कि—

"यहां से तीन सीढिया चढने पर एक मडप आता हैं जिस को नव स्तभ होने के कारण नौ चौकी कहते हैं, यहा से तीसरे द्वार मे प्रवेश किया जाता है।

ऊपर की हकीकत लिखते हुवे श्रीमान् ओझाजी साहब विस्मरण हो गये हो ऐसा पाया जाता है, क्योंकि चौकी शब्द का अर्थ स्थम्भ नही बनता और यह शब्द सरल व परिचित है। तथापि चर्चात्मक स्थान मे पहुँच कर निज के देखने बाद भी चौकी शब्द का अर्थ स्थम्भ कैसे लिखा है समझ मे नही आता। इन का कथन प्रमाणिक व सत्य हकीकत वाला माना जाता है, तथापि इस विषय मे तो द्रष्टिदोष अवश्य है।

पाठक ! इस स्थान पर जा कर देखें तो पता लगता है कि इन नो चौकी पर बारह स्थम्भ तो खुले दिखते हैं, और चार स्थम्भ दीवार के सहारे के हैं। इन सोलह स्थम्भो के बीच मे नो चौकी का स्थान मोजूद है। जो जैन श्वेताम्बराचार्य के उपदेश से गोख के ऊपर की दीवार मे लगे हुवे शिलालेख से साबित होता है।

नो चोकी बाबत श्रीमान् ओझाजो साहब ने ऐसा ही बयान तीन नो चौकी जो राजसमुद्र की पाल ऊपर बनी हुई है, उन का विवरण लिखते "राजपूताने के इतिहास" मे किया है जिसको हम द्रष्टिदोष मानते हैं। लेकिन श्वेताम्बर समाज के आचार्यमहाराज के उपदेश से नो चोकी बनवाई गई जिस

उन्नीसवीं सदी में हुवे हैं और उन्हीं के उपदेश से नौ चौको मण्डप बना है जो श्वेताम्बरी आचार्य थे।

ऊपर के कथन से भली भांति समझ में आ गया होगा कि मन्दिर के ऊपर का शिखर तो संवत् १६८५ में और बावन जिनालय के तोनों बड़े मन्दिर आदि की प्रतिष्ठा संवत् १७४६ में व नौ चौकी के मण्डप की तामीर संवत् १८४३ में होने के शिलालेख प्राप्त है। अब बाहर के भाग का विचार करना चाहिये।

बाहर आकर देखते हैं तो श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर बना हुवा है, जिसकी प्रतिष्ठा श्रीमान् सुमतिचन्द्रजी ने संवत् १८०१ में कराई है। जिस का शिला-लेख तत्स्थान में मौजूद है, जिस की नकल देखिये।

॥ ॐ ॥ प्रणम्य परया भक्त्या पद्मावत्याः पदाम्बुजं। प्रशस्ति र्लिख्यते पुण्या कविकेशर कीर्त्तिना ॥१॥ श्री अश्वसेन कुल पुष्पक रथञ्चभानुः। वासांग मानस विकासन राजहंसः ॥ श्री पार्श्वनाथ पुरुषोत्तम एव भाति। धुलेव मंडनकरा करुणा समुद्रः ॥ २ ॥ श्रीम-ज्जगत्सिंह महीश राज्ये। प्राज्यो गुणंर्जात ईहालथोयं ॥ आपुण्पदत्त स्थिरतासुपैतु। सं पश्यतां सर्व सुखप्रदाता॥३॥

दोहा

सुर मन्दिरकारक सुखद, सुमतिचद्र महासाध. ।
तपे गच्छ में तप जप तणो, उपत उदधि अगाध ॥४॥
पुन्य थाने श्री पार्श्वनो, पुहवी परगट कीध ।
खेमतणो मनषा तिसु, लाहो भव नो लीध ॥५॥
राजमान मुहता रतन, चातुर लषमीचद ।
उच्छव किधा अति घणां, आणी मन आनन्द ॥६॥
दिल सुध गोकलदासरे, कीध प्रतिष्ठा पास ।
सारे ही प्रगटयो सही, जगति मे जस वास ॥७॥
सकल सघ हरषित हुओ, निरमल रवि जिन नाम ।
रायो मुनि महत सरस करता पुण्य सकाम ॥८॥
कवित । सातिदास, सचित सत दावया लषमीचदह. ।
सघ मनुष्य सिरदार सहस किरण सुख के कदह' ॥
वल्लभ दोसी वीर धीर, जिन धर्म धुरधर. ।
मुलचद गुण मूलहीर धाया उर गुणहर ॥
सकल सघ सानिधकर सुमतिचद महासाध· ।
पास सदन कियो प्रगट, निश्चल रही निरवाध: ॥६॥

श्लोक —

तद्वारेक पूज्यकुद कृपारयो देवेर प्रविलग्न विचित्र. ।
पूजाव तेस्मं प्रविक्त लितावं सघेन सत्सौम्य गुणान्वितेन ॥१०

गजधर सकल सुज्ञान, धराहरी कीधो गुण हेर ।
रच्यो बिंब जिनराजको करणवंत कुबेर ॥११॥
आर्या । शशीव सुख राज वर्षे । माधवमासे वलक्ष
पक्षे च । पंचम्यां भृगुवारे हि कृता प्रतिष्ठा जिनेशस्य॥१२॥
महागिरि महासूर्य्यं, शशिशेष शिवादयः ।
जगवल्लभ पार्श्वस्य तावतिच्छतु बिंबकं ॥ १३ ॥

श्री संवत १८०१ शाके १६६६ प्रमिति वैशाख सुदि ५ शुक्रवासरे श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ बिंबं प्रतिष्ठित बृहत्तपागच्छीय सुमतिचन्द्रगणिना कारापितं ॥ श्रीरस्तु ॥ शुभं भवतु ॥

ऊपर के लेख से विदित होता है कि श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान के मन्दिर की प्रतिष्ठा संवत् १८०१ में श्री सुमतिचन्द्रजी गणीने कराई है। इस मन्दिर को देखे बाद मन्दिर के किल्ले की दीवार पर ध्यान पहुँच जाता है। जिस के लिये हमारे दिगम्बर भाइयों का कहना है कि यह किल्ला संवत् १८६३ में दिगम्बर श्रावकने बनवाया और इस विषय का शिलालेख भी कहते हैं। लेकिन किल्ला बनवाने का समय तो दूसरा प्रतीत होता है। क्योंकि इस किल्ले के बाबत गांव सलूम्बर के रहनेवाले रोडजी गुरजी ने सम्वत् १८६० माह सुदी १५ गुरुवार को श्री केशरियाजी की लावनी बनाई उस में बयान किया है कि ।

"देवल तो मजबूत वना है। उपर झंडा सोने का ॥
"ओलुं दोलुं कोट वनाया। सब संगीनवंध चुनेका ॥१४॥

इस को पढने से पाया जाता है कि मन्दिर के चारो तर्फ किल्ला सम्वत् १८६० से पहले का बना हुवा था। लावनी बनाने वाले बतलाते हैं कि चारो तर्फ मजबूत कोट चूने का बना हुवा है और मजबूत कोट तीन साल बाद ही जीर्ण नही हो सकता। इसके सिवाय सेठ सुलतानचन्दजी ने सम्वत् १८८६ मे नोबतखाना बनवाया तो छब्बीस साल के बाद ही ऐसा किस तरह हो सकता है कि एक सम्प्रदायवाला पूरा कोट-किल्ला बनावे और आगे का मुख्य द्वार याने नौबतखाना दूसरे सम्प्रदायवाले को बनवाने देवे। इसके सिवाय श्री चारभुजाजी महाराज का मन्दिर जो सम्वत् १७६४ मे बना है उस को देखते हैं। और आगे चलकर श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथजी का मन्दिर जिस की प्रतिष्ठा सम्वत् १८०१ मे हुई है उसको देखने बाद किल्ले की दीवार से मिलान करते हैं तो अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि इन दोनो मन्दिरो की तामीर से पहले किल्ला बना हुवा है। इन दोना मन्दिरो की तामीर याने दीवार दरवाजा व आगन को देखने से कहना पडेगा कि किला बनवाये बाद यह दोनो मन्दिर बनवाये हैं। इस तरह के प्रत्यक्ष प्रमाण देखने बाद यह किला सम्वत् १८६३ मे दिगम्बर भाई ने बनवाया हो यह कथन सत्य प्रतीत नही होता। लेकिन ऐसा साबित करने के लिये जो शिलालेख सम्वत् १८६३ का कहा जाता है उस को द्रष्टिगत

रखते हुवे कहना पड़ेगा कि शिलालेख का इतना साफ मतलव नहीं निकलता होगा कि दिगम्वर भाई ने ही वनवाया हो। हमारी समझ में तो ऐसा आता है कि उस समय किल्ला कुछ ऊंचा कराया हो। और यदि ऊंचा कराया हो तो किल्ला पहले का वना हुवा सावित होता है। लेकिन सम्वत् १८६३ में कुछ ऊंचा कराया हो तो यह सम्भव है, क्योंकि श्री पार्श्व-नाथ भगवान के मन्दिर के पास वाली दीवार से आगे जो किले की दीवार है वह कुछ ऊंची वनी हुई है। और अनुमान होता है कि किसी दिगम्वर भाविक श्रावक के पास श्रीकेशरि-यानाथजी के नाम का द्रव्य निकाला हुवा हो या चमत्कार-भक्ति-वश कुछ द्रव्य इस तीर्थ में खर्च करने आये हों और तीर्थ-रक्षकों ने दीवार ऊची वनवाने की इजाजत दी हो। तो इस का यह मतलव नहीं होता के किला ही दिगम्वर भाई ने बनवाया है और नौवतखाना सम्वत् १८८९ मे कुंवर सुलतानचन्दजी ने वनवाया जिसकी प्रशस्ति भी नौबतखाने पर इस तरह की मौजूद है।

नौबतखाने के लेख की नकल.

ॐ श्री केसरियानाथजी रे नौवतखानारी प्रशस्त लिख्यते। शुभ संवत् १८८९ रा शाके १६५४ प्रवर्त-माने मासोत्तमे मासे मृगसिर मासे शुक्लपक्षे दशम्यां तिथौ रविवासरे श्री धडक देशे श्रीधुलेवनगरे श्रीदेवा-